खरी-खरी ◆ कारोबारी सिस्टम में उपभोक्ताओं के हितों की बजाय व्यापारियों के हितों को बढ़ावा देना गलत

उपभोक्ताओं में बढ़ती गैर-बराबरी खतरनाक

आधुनिक अर्थशास्त्र के जनक एडम स्मिथ ने कहा था कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं में संसाधनों के इस्तेमाल के क्रम में आर्थिक गतिविधियों की दिशा न तो राजा तय करते हैं और न राजनीतिज्ञ, पुजारी और न ही कंपनियों के सीईओ। यह भूमिका निभाते हैं उपभोक्ता। सन 1776 में अपनी रचना वेल्थ ऑफ नेशन में उन्होंने कहा, उपभोग ही सभी तरह के उत्पादन का एक मात्र लक्ष्य और उद्देश्य है। लिहाजा उपभोक्ताओं के हितों को ध्यान में रखते हुए ही उत्पादकों के हितों को बढ़ावा देना चाहिए। लेकिन हो यह रहा है कि उत्पादकों के हितों के लिए उपभोक्ताओं के हितों की बलि दी जा रही है।

लेखक एनसीएईआर में सेंटर फॉर मैक्रो कंज्यूमर रिसर्च के डायरेक्टर हैं।

राजेश शुक्ला

स्मिथ का यह आकलन भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए बिल्कुल सटीक है, जहां घरेलू मांग राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का मजबूत आधार बनी हुई है। देश में पिछले दो दशक में उपभोक्तावाद में आए तेज बदलाव ने बाजार संचालकों, विश्लेषकों और नीति-निर्माताओं को उलझन में डाल दिया है।

भारतीय उपभोक्ता कई सिर वाला दैत्य की तरह है, जो लगातार यह सवाल पूछ रहा है कि हम किस भारत और किन लोगों के भारत के बारे में बात कर रहे हैं। एक भारत वह है जिसकी प्रति व्यक्ति आय ब्राजील के प्रति व्यक्ति आय से ज्यादा है। एक भारत वह है जो इंडोनेशिया से थोड़ा ही गरीब है या फिर वह भारत जो इंडोनेशिया और ब्राजील के आकार से बड़ा है लेकिन बांगलादेश जितना ही गरीब। भारत में निचले पायदान पर खड़े 60 फीसदी उपभोक्ताओं की राष्ट्रीय आय में सिर्फ 30 फीसदी हिस्सेदारी है। आखिरी निजी उपभोग व्यय (पीएफसीई) में इसकी हिस्सेदारी 40 फीसदी है। हालांकि शीर्ष के 40 फीसदी घरेलू उपभोक्ताओं की आय में 72 फीसदी हिस्सेदारी है। सरप्लस आय में उनकी हिस्सेदारी लगभग 90 फीसदी है।

पिछला एक दशक तेज आर्थिक विकास का रहा है और इसके आगे भी बरकरार रहने की संभावना है। आर्थिक विकास की इस रफ्तार से निश्चित तौर पर भारतीय अर्थव्यवस्था में ढांचागत बदलाव देखने को मिलेंगे। उदाहरण के तौर पर अगर 2010-15 के दौरान एनएनपी वृद्धि दर 8.75 फीसदी रहती है तो 2015-16 में कृषि आय घट कर 32 फीसदी रह जाएगी। जबकि सत्तर के दशक में ग्रामीण आय में इसकी हिस्सेदारी 74 फीसदी थी। इसलिए साफ है कि आने वाले दिनों में भारत के गांवों में गैर कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी बढ़ेगी। 42 फीसदी ग्रामीण परिवार अपनी आय गैर कृषि स्रोतों से हासिल करेंगे। जो परिवार नई सेवाओं के क्षेत्र में काम करेंगे, उनकी आय सबसे तेज यानि 200 फीसदी की दर से बढ़ेगी। 2010 और 2015 के बीच औसत परिवार की आय में सालाना 11,000 रुपये की बढ़ोतरी होगी। ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वालों की तुलना में शहरी क्षेत्रों की आय में तीन गुना बढ़ोतरी होगी। हमारे आकलन के मुताबिक ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में शीर्ष पर मौजूद परिवारों की सालाना आय में क्रमशः 24000 और 75000 रुपये की बढ़ोतरी होगी। जबकि पिरामिड के निचले तले में मौजूद लोगों की आय में सिर्फ 2100 रुपये की बढ़ोतरी होगी। चाहे वे ग्रामीण इलाके मे रहते हों या शहर में। वर्ष 1993-94 में शीर्ष के 20 फीसदी परिवारों की राष्ट्रीय आय में 37 फीसदी हिस्सेदारी थी। लेकिन 2014-15 में इसके 58 फीसदी पर पहुंच जाने की संभावना है। वर्ष 1993-94 में पिरामिड में नीचे मौजूद आबादी की राष्ट्रीय आय में सात फीसदी हिस्सेदारी थी। लेकिन 2014-15 में यह घट कर छह फीसदी हो जाएगी।

भारत जैसी बड़ी आबादी वाले देश में आय की गैर-बराबरी के असर का अंदाजा लगाना मुश्किल है। अगर सरकार एक बड़ी आबादी की आर्थिक और सामाजिक जरूरतों को पूरा नहीं करती है तो नाराजगी फैलना स्वाभाविक है। यह नाराजगी बड़े पैमाने पर सामाजिक अस्थिरता की वजह बन सकती है। वंचित आबादी अपने वाजिब हक के लिए दबाव बना सकती है। वे पिरामिड में मौजूद ऊपर के लोगों से बराबरी की मांग नही करेंगे लेकिन गैरबराबरी को कम करने पर जरूर जोर देंगे। अवसरों से वंचित लोगों में ज्यादा आबादी युवाओं की है और उनकी नाराजगी निश्चित तौर पर सरकार के लिए मुश्किल पैदा करेगी। मेरा मानना है कि सरकार को उन्हें ऐसी जगह मुहैया करानी होगी, जहां वे सुरक्षित और खुश रहें। आय पिरामिड में निचले तले पर मौजूद 22 करोड़ की आबादी के लिए यह करना जरूरी है। यह जिम्मेदारी सरकार, नीति-निर्माताओं, कॉरपोरेट और धनी लोगों की होनी चाहिए। पिरामिड में नीचे मौजूद 20 फीसदी लोगों की बेचैनी इन लोगों की सुरक्षा के लिए खतरा है। इतिहास इसे कई बार साबित कर चुका है।

स्मिथ ने उपभोक्ताओं की आजादी और नेतृत्व की जबरदस्त पैरवी की है। उन्होंने कारोबारी सिस्टम में उपभोक्ताओं के हितों की बजाय व्यापारियों और मैन्युफैक्चरर्स के हितों को बढ़ावा देने की आलोचना की है। उन्होंने लिखा है- लालच और जोड़तोड़ कमजोर फैसलों की ओर ले जाते हैं। अविश्वसनीय सूचनाओं के वजह से बेहतरी के लिए संसाधनों का इस्तेमाल नहीं हो पाता है। और फिर शुरू होता है, सेंधमारी, डकैती और घोटालों का सिलसिला। जाहिर है उपभोक्ताओं को इनसे बचाने की जरूरत है।